© 2017 IJSRSET | Volume 3 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
Themed Section : Engineering and Technology

अभिनवगुप्त का रस सिद्धान्त

नेम चन्द्र
शोधच्छात्र,
संस्कृत तथा प्राकृत भाषा विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

'रस–सूत्र' के सर्वश्रेष्ठ व्याख्याता 'अभिव्यक्तिवाद' के प्रवर्तक आचार्य अभिनवगुप्त एक अलंकारिक आचार्य हैं। इनके सम्पूर्ण विवेचन का केन्द्रबिन्दु 'सामाजिक–रसानुभूति' ही है। सारांश रूप में रससूत्र–विषयक इनका सिद्धान्त निम्नलिखित है–

इनके मत में 'रस' की न तो उत्त्पत्ति होती है, न अनुमिति होती है और न ही भुक्ति होती है। रस की तो केवल अभिव्यक्ति मात्र होती है। रस विषयगत नहीं, अपितु विषयीगत होता है। प्रत्येक व्यक्ति के अन्तःकरण में जो वासनारूप अव्यक्त स्थायीभाव होते हैं। वही व्यंजना के अलौकिक विभावन–व्यापार द्वारा जब जाग्रत होते हैं, तो सुख–दुःख की अनुभूति होती है। यही रसाभिव्यक्ति या 'रसनिष्पत्ति' है। यहाँ पर काव्य साधक है, व्यंजना–व्यापार साधन है तथा रस ही साध्य है।

कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में 'रति' आदि स्थायीभाव बीज रूप में पहले से ही निरन्तर विद्यमान होते हैं। काव्य–श्रवण या अभिनव–प्रदर्शन के समय, उनके द्वारा हमें ऐसे विभाव तथा अनुभावादि का अनुभव होने लगता है; जो अन्तःकरण के अनुकूल होने के कारण बहुत अच्छे लगते हैं। इस समय हमारी 'रति' आदि सहज भावनाएँ (स्थायीभाव) उद्भूत हो जाती हैं; जिससे सामाजिक के कोमल हृदय में एक प्रकार की आनन्दानुभूति होने लगती है। इसी आनन्दानुभूति को 'रस' कहते है। यह 'रस' विभावनुभावादि से वैसे ही विलक्षण होता है; जैसे– इलायची, मिर्च, शर्करा, तथा कर्पूरादि के मिश्रण से निर्मित 'पानक–रस' इलायची इत्यादि के रस से विलक्षण होता है।

आचार्य अभिनवगुप्त 'रस' की अलौकिकता तथा अनिर्वचनीयता सिद्ध करते हुए कहते हैं कि 'रस' विभावादित कारणों से उत्पन्न न होने के कारण 'कार्य' नहीं है, और विभावादि उसके कारण भी नहीं; क्योंकि विभावादि के नष्ट हो जाने पर भी रस की सम्भावना बनी रहती है। इसी प्रकार 'रस' ज्ञाप्य भी नही है और न ही विभावादि 'रस' के ज्ञापक है; क्योंकि पूर्वसिद्ध घट के समान प्रमेयभूत 'रस' का पूर्व अस्तित्व नहीं रहता।

''अतएव विभावादयो न निष्पत्तिहेतवो रसस्य, यद्धोधापगमेऽपि रससम्भव–प्रसंगात्; नापि ज्ञप्तिहेतवः येन प्रमाणमध्ये पतेयुः। सिद्धस्य कस्यचित् प्रमेयभूतस्य रसस्याभावत्।'' (अभिनवभारती)।

रस–सिद्धान्त के स्पष्टीकरण एवं विकास में आचार्य अभिनवगुप्त का योगदान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने एक ओर तो रस को 'काव्यार्थ का भावन' बताकर काव्य के अर्थ पक्ष को भी सम्यक् महत्त्व प्रदान किया तो दूसरी ओर रस को काव्य या नाटक का एक अंक न मानकर उसे सम्पूर्ण रचना में व्याप्त सर्वोपरि तत्त्व सिद्ध किया। स्थायीभाव और रस के अन्तर को भी जितनी सूक्ष्मता से आचार्य अभिनवगुप्त ने स्पष्ट किया, उतना उससे पूर्व नहीं हो पाया था। रसानुभूति के मूल आधार के रूप में उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण खोज है– सहृदय

की वासनाओं के उद्धेलन एवं अभिव्यंजना सम्बन्धी विचार। साथ ही रसानुभूति के बाधक तत्त्वों के रूप में उसके सात प्रकार के विघ्नों की स्थापना भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

इस प्रकार हम देखते है कि आचार्य अभिनवगुप्त ने रस सिद्धान्त के विभिन्न उपेक्षित पक्षों, अंगों व तत्त्वों का उद्घाटन करके उसे एक अत्यन्त व्यापक स्वरूप प्रदान किया और साथ ही रसास्वादन की प्रक्रिया के साधक एवं बाधक तत्त्वों की गवेषणा करते हुए उसे मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया। यह दुर्भाग्य की बात है कि आचार्य अभिनवगुप्त के द्वारा उद्घाटित अनेक नये तत्त्वों को परवर्ती आचार्यों ने अपेक्षित महत्त्व नहीं दिया। अभिनवगुप्त द्वारा विवेचित साधारणीकरण एवं अभिव्यक्तिवाद की ही चर्चा परवर्ती आचार्यो ने अधिक की– उनके द्वारा निरूपित अन्य पक्ष जैसे रसास्वाद के विघ्न, रसानुभूति में अलंकारादि का योगदान, आदि की उन्होंने उपेक्षा कर दी। वस्तुतः रससिद्धान्त को जो व्यापकता एवं गम्भीरता आचार्य अभिनवगुप्त ने प्रदान की थी वह परवर्ती युग के आचार्यो द्वारा ग्राह्य नहीं हो सकी। कदाचित् इसका कारण यही है कि परवर्ती आचार्यो में उस व्यापक दृष्टि एवं सूक्ष्म चिन्तना का अभाव था जो कि आचार्य अभिनवगुप्त की नूतन स्थापनाओं को ग्रहण करने के लिए अपेक्षित थी। पर इसके लिए अभिनवगुप्त को दोष नहीं दिया जा सकता।

सन्दर्भ :–

1. भरतमुनि का नाट्यशास्त्र
2. मम्मट का काव्यप्रकाश
3. अभिनवगुप्त की अभिनवभारती टीका
4. आचार्य आनन्दवर्धनाचार्य विरचित ध्वन्यालोक
5. कविराज विश्वनाथ कृत साहित्यदर्पण
6. शारदातनय कृत भावप्रकाशनम्